हरिद्रा
(सांस्कृतिक शोध का अन्तर्राष्ट्रीय उपक्रम)
ISSN : 2582-9092

अग्निपुराणानुसार धनुर्वेद (धनुर्विद्या) की मीमांसा

जयसिंह गोहिल

उद्देश्य : –

इस लेख में मैने अग्निपुराण में वर्णित धनुर्विद्या के लुप्तप्राय प्राचीनविद्या का परिचय प्रस्तुत करने की कोशिश किया है। लेख में मैने अग्निपुराण की समीक्षा के साथ–साथ अग्निपुराण का दूसरे विषयों के साथ तुल्नात्मक विवेचन भी प्रस्तुत करने का यथासंभव प्रयास किया है। धनुर्वेद प्राचीन भारतीय विज्ञान की एक सुदृढ़ एवं सुप्रसिद्ध शाखा है। इस ज्ञान शाखा के ग्रन्थ आज लुप्तप्राय हो गए हैं। कुछ ग्रन्थों को छोड़कर इप शाख के हस्तप्रत ग्रन्थ भी आज उपलब्ध नही होते हैं। इस लेख के माध्यम से सुधीजनों को धनुर्वेद का महत्व और उसकी उपयोगिता पता चले यही इस लेख का उद्देश्य होगा।

विषय–प्रवेश :–अग्निपुराण में राजधर्म तथा उसके अंगो के वर्णन के प्रसंग में धनुर्विद्या का अध्याय 249 मे प्रारम्भ होकर 252 अध्याय पर्यन्त वर्णन प्राप्त होता है।

धनुर्वेद यजुर्वेद का उपवेद है। प्राचीनकाल में पूरे भारत में इस ज्ञान परम्परा का बड़े ही आदर के साथ प्रचार–प्रसार हुआ था। प्राचीन भारत में धनुर्वेद पर बहुत सारे ग्रन्थ उपलब्ध थे, किन्तु कालान्तर में धनुर्वेद के प्रायः सभी ग्रन्थ लुप्तप्राय से हो गए। कतिपय ग्रन्थों में उनका विवरण प्राप्त होता है। यथा –

	ग्रन्थ	ग्रन्थकार
1-	नीतिसार	आचार्य कामन्द
2-	अर्थशास्त्र	आचार्य कौटिल्य
3-	युक्तिकल्पतरु	महाराज भोज
4-	नीतिमयूख	
5-	वीरचिन्तामणि	
6-	अग्निपुराण	
7-	शार्ङ्गधर पद्वति	आचार्य शार्ङ्गधर
8-	मानसोल्लास	आचार्य सोमेश्वर
9-	नीतिवाक्यामृत	आचार्य सोमदेव सूरि
10	महाभारत	महर्षि वेदव्यास
11-	रामायण	महर्षि वाल्मीकि

आदि ग्रन्थों में धनुर्वेद का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

1-	नीतिप्रकाशिका	महर्षि वैशाम्पायन
2-	धनुर्वेदसंहिता	महर्षि वशिष्ठ

ISSN : 2582-9092

3- कौदण्ड मण्डन

4- शिवोक्त धनुर्वेद आदि ग्रन्थ स्वतन्त्र रूप से धनुर्विद्या के ग्रन्थ हैं।

उपर्युक्त ग्रन्थों के अलावा अग्निपुराण में भी धनुर्वेद का संक्षिप्त किन्तु साङ्गोपाङ्ग प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त होता है। महर्षि वशिष्ठ के समक्ष धनुर्वेद का वर्णन करते हुए भगवान अग्निदेव कहते हैं –

चतुष्पादं धनुर्वेदं वदे पञ्चविधं द्विजः।
रथनागश्वपतीनां योधांश्चाश्रित्य कीर्तितम्।।[1]

अर्थात चार पादों से युक्त धनुर्वेद पांच प्रकार का होता है और अग्निदेव ने रथ–हाथी–घोड़े और पैदल सम्बन्धी योद्धाओं का आश्रय लेकर वर्णन किया है।

धनुर्वेद के चार पाद हैं – 1.रथ 2.हाथी 3.अश्व और 4.पैदल

धनुर्वेद के पांच प्रकार हैं यथा–1.यन्त्रमुक्त 2.पाणिमुक्त 3.मुक्तसंधारित 4.अमुक्त और 5. बाहुयुद्ध।[2]

महाभारत के आदिपर्व में शत्रुदमन बालक अभिमन्यु ने वैदिकज्ञान प्राप्त करके पिता अर्जुन से चारों पादों और दसविध अंगों से युक्त दिव्य एवं मानुष आदि सब प्रकार के धनुर्वेद के ज्ञान को प्राप्त किया था। यथा –

चतुष्पादं दशविधं धनुर्वेदमरिदंमः।
अर्जुनाद् वेद वेदज्ञः सकलं दिव्यमानुषम्।।[3]

चार पादों के बारे में आचार्य नीलकंठ जी लिखते हैं –

मन्त्रमुक्तं पाणिमुक्तं मुक्तामुक्तं तथैव च।
अमुक्तं च धनुर्वेदे चतुष्पादच्छस्त्रमीरितम्।।[4]

नीतिप्रकाशिका में भी कुछ ऐसा ही वर्णन प्राप्त होता है। यथा –

मुक्तं चैव ह्यमुक्तं च मुक्तामुक्तमतः परम्।
यन्त्रमुक्तं च चत्वारि धनुर्वेदपदानि वै।।[5]

महाभारत में ''चतुष्पादं दसविधम्'' कहकर धनुर्वेद के दस प्रकार कहे गए हैं। परन्तु अग्निपुराण में अस्त्र या युद्ध के पांच प्रकार को ध्यान में रखा गया है। किन्तु महाभारत में धनुर्वेद के 10 अंगों को लेकर ही 10 भेदों का कथन मिलता है। महाभारत में अन्यत्र कहा गया है कि –

'' चतुर्विधं धनुर्वेदं शास्त्राणि विविधानि च।[6]

किन्तु अग्निपुराण में युद्ध के प्रकार के आधार पर धनुर्वेद के भी चार प्रकार बताए गए हैं। ये सभी युद्ध के उपकरण युद्ध को गति प्रदान करते हैं। यथा – 1.रथ 2.हस्ति 3.अश्व 4.पैदल।[7]

अश्वारोही के लक्षण :– दैत्यगुरु शुक्राचार्य नें चार पादों की व्याख्या इस प्रकार की है । जो व्यक्ति घोड़ों के मनोभाव, उनकी जाति, उनके रंग, उनकी भौहें, उनके गुण, उनकी चाल, उनकी ताकत, उनकी क्षमता, उनके रोग, उनके शुभाशुभ लक्षण, उनके पालन–पोषण का ढंग, उनकी उंचाई, घुड़सवारी तथा उनके दांत देखकर या गिनकर उनकी उम्र की जानकारी रखनेवाला, शूरवीर, व्यूहरचना में प्रवीण और अत्यन्त बुद्धिमान है वह अश्वाधिपति या अश्वारोही बनता है।[8]

सारथि के लक्षण :– रथारोही किं वा सारथि' जो व्यक्ति उपरोक्त अश्वारोही के गुणों से युक्त होने के बावजूद भारवाहन करने में सक्षम रथ में जोते जाने वाले घोड़ों तथा रथ की मजबूती आदि तथा रथ का हाँकना, घुमाना तथा राह बदलना जानता है तथा अपने रथ की विशेष गति से शत्रु के आयुधों को विफल बनाने वाला, शत्रु के घोड़ों की मुठभेड़ होने पर अपने घोडों को बचाने की कला में निपुण व्यक्ति को ही सारथी बनाना चाहिए।[9]

गजाधिपति महावत का लक्षण :– जो व्यक्ति प्रभेद प्रभृति हाथियों की जाति को उनकी चिकित्साविधि–प्रशिक्षण–रोग–पालनविधि तथा उनके तालु, जीभ और नाखून के द्वारा उनके गुणों को उन पर चढ़ने की तथा चलाने की कला की जानाकरी रखने वाला हो तो वह महावत गजाध्यक्ष बनता है।[10]

प्रदाति के लक्षण :–जो व्यक्ति धर्म–काल और यात्रानुसार बर्ताव करने वाला हो, हथियार चलाने वाला हो, सैन्य–विन्यास की जानकारी रखता हो, दुश्मन को नीच दिखाने में प्रवीण हो, लड़कपन रहित हो, गबरू युवान, बहादुर, आत्मसंयमी, मजबूत देहवाला हो और धर्म में तत्पर हो ऐसा व्यक्ति पदाति बनता है।[11]

धनुर्वेद में जिन पांच प्रकार के अस्त्रों की बात की जाती है वे इस प्रकार हैं –

1-	मुक्तम्	बाणादि विज्ञेयं	मुक्तसंधारित युद्ध
2-	अमुक्तम्	खडगादि	अमुक्तयुद्ध
3-	मुक्तामुक्तम्	उपसंहार सहित अस्त्र	यन्त्रमुक्तम् युद्ध
4-	मन्त्रमुक्तम्	उपसंहार रहित अस्त्र	पाणिमुक्त युद्धम्
5-	बाहुयुद्धम्	केवल हाथ सहाय से	बाहुयुद्धम्।[12]

शस्त्र सम्पत्ति और अस्त्र सम्पत्ति के भेद से युद्ध के दो प्रकार माने गए हैं। यथा – ऋजुयुद्ध और माया युद्ध[13]

1.क्षेपणी (गोफन) धनुष एवं यन्त्र आदि के द्वारा जो अस्त्र फेंके जाते हैं उसे यन्त्रमुक्त यंत्र कहा जाता है।[14]और यन्त्रमुक्त अस्त्र के साथ जो युद्ध लडा जाए उसे यन्त्रमुक्त युद्ध कहा जाता है।

2.प्रस्तखण्ड और तोमर आयुध आदि को पाणिमुक्त कहा जाता है। जिस युद्ध में पाणिमुक्त अस्त्र–शस्त्र का प्रयोग किया जाता है उसे पाणिमुक्त युद्ध कहते हैं।[15]

3.भाला आदि जो अस्त्र शत्रु पर छोड़ा जाए और फिर उसे हाथ में ले लिया जाए उसे मुक्तसन्धारित शस्त्र कहते है। उस अस्त्रों से लड़ा जाने वाला युद्ध मुक्तसन्धान रहित युद्ध कहा जाता है।[16]

4.खड्ग को अमुक्त कहते हैं। इसका युद्ध अमुक्त युद्ध कहलाता है।[17]

5.बिना अस्त्र–शस्त्र मल्ल की भाँति जो युद्ध लड़ा जाता है उसे मल्लयुद्ध या नियुद्ध कहते हैं।[18]

अग्निदेव का आदेश है कि युद्ध की इच्छा रखने वाला पुरुष श्रम को जीते और योग्य पात्रों का संग्रह करें। उत्तम–मध्यम और अधम रीति से युद्ध तीन प्रकार होते हैं।

1-	धनुषबाणाधारित युद्ध	श्रेष्ठयुद्ध
2-	भाला तोमराधारित युद्ध	मध्यमयुद्ध
3-	खड्गाधारित युद्ध	निम्नयुद्ध

अग्निपुराणानुसार 'धनुर्वेदे गुरुविप्रः वर्णद्वयस्य च।''[19] अर्थात् धनुर्वेद में गुरु ब्राह्मण ही होना चाहिए और युद्ध करने का अधिकार ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों वर्णों को होना चाहिए। व्यक्तिगत प्रयोजन के लिए शूद्र को भी धनुर्वेद शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। वशिष्ठ संहिता में भी कहा गया है –

धनुर्वेदे गुरुविप्रः प्रोक्तो द्वयस्य च।
युद्धाधिकारः शूद्रस्य स्वयं व्यापादि शिक्षया।।[20]

अग्निपुराण में वर्णसंकर भी युद्ध की शिक्षा प्राप्त करते थे और राष्ट्ररक्षा हेतु युद्ध करते थे ऐसा

ISSN : 2582-9092

वर्णन मिलता है।[21]

स्थान :– लक्ष्यवेध तथा युद्ध के समय धनुर्धर विविध स्थानों का आश्रय लेकर बाण चला है। व्यवहार में उन स्थानों को पेत्तरा शब्द कहकर बुलाते हैं। धनुर्वेदीय ग्रन्थों में आठ प्रकार के स्थानों का वर्णन मिलता है।[22]

	स्थान	प्रयोजन
1-	समपाद	नालिकास्त्र के प्रयोग के लिए।
2-	वैशाख	कूट लक्ष्य साधन के लिए।
3-	मण्डल	स्थूलबाण–नाराच चलाने के लिए।
4-	आलीढ़	बाण को दूर फेकने के लिए।
5-	प्रत्यालीढ़	समीपलक्ष्यवेधनाय
6-	स्थानक	दृढ़लक्ष्यभेदन के लिए।
7-	विकट	कठोर वस्तु भेदन के लिए।
8-	सम्पुट	चित्रलक्ष्य ।

इस तरह स्थान शब्द का अभिप्राय योद्धाओं का युद्धस्थल में खड़े होने का ढंग जान पड़ता है।

धनुष्य का परिमाण (नाप) :– अग्निपराण के अनुसार योद्धा के बाण से धनुष्य सर्वथा बड़ा होना चाहिए और मुष्टि के सामने बाण के पुंख तथा धनुष के दण्ड में बारह अंगुल का अन्तर होना चाहिए। ऐसी स्थिति में धनुर्दण्ड को प्रत्यञ्चा से संयुक्त कर देना चाहिए वह अधिक छोटा या बड़ा नहीं होना चाहिए।[23]

बाणानुसंधान :– बाणानुसंधान के बारे में अग्निदेव ने धनुष को नाभिस्थान में और बाण–संचय को नितम्ब पर रखकर उठे हुए हाथों को आँख और कान के बीच में करके तथा उस अवस्था में बाण को फेंके।[24]

प्रत्यञ्चा :– डोरी या प्रत्यञ्चा को खींचकर पूर्णरूप से फैलाए। प्रत्यञ्चा न तो भीतर हो न बाहर, न ऊंची हो और न ही अत्यन्त नीची। न कुबड़ी हो, न उत्तान, न चंचल हो और न ही अत्यन्त आवेष्टित वह सम स्थिरता युक्त और दण्ड की भाँति सीधी होनी चाहिए।[25] महर्षि वशिष्ठ के अनुसार यह गुण धनुष के बराबर हो। उसमें कहीं भी जोड़ न हो। यह शुद्ध तीन तन्तुओं को एक साथ करके बटी हुई हो। पतली–मोटी न होकर एक समान हो ऐसी ही डोरी युद्ध में सब प्रकार की क्रिया को सहन करने में सक्षम है।[26]

अग्निपुराण में इस अध्याय में लक्ष्यवेध के लिए किस तरह स्थान लेना चाहिए ? किस तरह बाण को अंगुष्ठ–तर्जनी और अनामिका द्वारा पकडना चाहिए, अनुसंधान आदि करके सावधानी से पकड़ने की बात की है।

बाण और धनुष का माप एवं प्रकार :–

उत्तम श्रेणी का बाण बारह मुष्टियों के माप का

मध्यम श्रेणी का बाण	ग्यारह मुष्टि के माप का।
कनिष्ठ श्रेणी का बाण	दस मुष्टि माप का।

धनुष्य :–

उत्तम धनुष्य	चार हाथ लम्बा
मध्यम धनुष्य	साढ़े तीन हाथ लम्बा
कनिष्ठ धनुष्य	तीन हाथ लम्बा
पैदल युद्ध के लिए	सर्वदा तीन हाथ
घोड़े रथ–हाथी पर सवार	सर्वदा उत्तम धनुष्य।[27]

महर्षि वशिष्ठ के अनुसार –

वरं प्राणाधिको धन्वी न तु प्राणाधिकं धनुः।
धनुषा पीड्यमानस्तु धन्वी लक्ष्यं न पश्यति।।
अतो निजबलोन्मानं चापं स्याच्छुभकारकम्।।[28]

अग्निपुराण के दूसरे अध्याय में धनुषबाण लेने और उनके समुचित प्रयोग करने की शिक्षा तथा वेधनीय लक्ष्य के विविध भेदों का वर्णन मिलता है। योद्धा को चाहिए कि वह शास्त्रोचित पूरी लम्बाई वाले धनुष का निर्माण कराकर उसे अच्छी तरह पोंछकर यज्ञ भूमि में स्थापित करे। बाद में बाणों का संग्रह करके कवच धारण करके एकाग्रचित्त होकर तूणीर ले उसे पीठ के और दाहिनी काँख के पास दृढ़ता के साथ बांधे।इस प्रकार करने से विलक्ष्य बाण भी उस तूणीर में स्थिर रहता है। फिर दाहिने हाथ से तूणीर के भीतर से बाण को निकाले। उसके साथ बायें हाथ से धनुषको वहां से उठाकर उसके मध्य भाग में बाण का सन्धान करे।[29]

सन्धान :– वा. संहिता में तीन प्रकार के सन्धान की बात की गई है।

1-	अधःसन्धान	दूर के लक्ष्यभेद के लिए।
2-	उर्ध्वसन्धान	चंचल लक्ष्यभेदन के लिए।
3-	समसन्धान	निश्चल लक्ष्य भेदन के लिए।

अग्निपुराण में ऐसा कहा गया है कि चित्त में विषाद न आने दें और धनुष पर बाण रखकर सिंहकर्ण[30] नामक मुष्टि द्वारा पुंखरहित बाण को दृढ़तापूर्वक पकड़कर सन्धान करके लक्ष्यवेधन करना चाहिए। धनुर्धर मन को भी दृष्टि के साथ लक्ष्यगत करके बाण को शरीर के दाहिने भाग की ओर रखकर लक्ष्य की ओर चलाना चाहिए।[31] फिर तुरन्त ही तूणीर से अंगुष्ठ और तर्जनी द्वारा बाण निकालकर मध्यमा अंगुली से बाण को दबाकर शीघ्रता से सन्धान करे। चारों ओर बाण चलाकर योद्धाओं को अभ्यास करना चाहिए।[32]

वेध एवं उसके प्रकार :– अग्निपुराण में तीक्ष्ण–परावृत–गत–निम्न–उन्नत– क्षिप्रादि आदि 6 प्रकार के वेध में से किसी भी प्रकार का आश्रय लेकर सैकड़ों बार हाथ से बाणों को निकालकर छोड़ने की क्रिया से धनुष्टंकार करें।[33] उस पर टंकार दें। शिवोक्त धनुर्वेद में पुष्पवेध, मत्स्यवेध और मांसवेध ऐसे तीन प्रकार के वेध बताए गए हैं।[34]

वेध्य के प्रकार[35] :–

1-	दृढवेध्य	– नतनिम्नभेद और तीक्ष्णभेद
2-	दुष्कर वेध्य	– मस्तकपन और मध्य

ISSN : 2582-9092

3- चित्रवेध्य – निम्नवेध्य और उर्ध्वगतवेध्य

ऐसे सभी वेध्य में कुशल धनुर्धर पहले दाएं और बाएं पार्श्व से शत्रु सैन्य पर चढ़ाई करे तो इससे वह लक्ष्य पर विजय प्राप्त कर सकता है।[36] परन्तु अग्निपुराण में वेध्य की अपेक्षा भ्रमण को अधिक उत्तम बताया गया है। अभ्यासी धनुर्धर लक्ष्य की ओर अपने बाण के मुख्य भाग से आच्छादित करके लक्ष्य को दृढ़ता पूर्वक भेदन करना चाहिए।[37]

लक्ष्य :– लक्ष्य भ्रमणशील अत्यन्त चंचल और स्थिर होता है। लक्ष्य पर सब ओर से प्रहार करना चाहिए। शिवधनुर्वेद में चार प्रकार के लक्ष्य बताए गए हैं। यथा –

लक्ष्यं चतुर्विधं ज्ञेयं स्थिरं चैव चलन्तथा।
चलाचलं द्वयचलं वेधनीयं क्रमेण तु।।[38]

कर्मयोग विधान का ज्ञाता योद्धा, योग्य आचरण करके मन–नेत्र और दृष्टि के द्वारा लक्ष्य के साथ एकता स्थापन की कला सीख ले तो वह योद्धा यमराज को भी जीत सकता है।[39] ऐसा अग्निदेव का मानना है।

पाश निर्माण और चलाने के विधि :– आगे के अध्याय में अग्निदेव ने पाश का निर्माण और उसके चलाने की विधि का वर्णन किया है। पाश दस हाथ का बड़ा गोलाकार और हाथ के लिए सुखद होना चाहिए इसके निर्माण में अच्छी मूँज, हरिण की ताँत, अर्क के छिलकों की डोरी और सुदृढ़ सूत्र आदि के द्वारा निर्माण करना है।[40] पाश की शिक्षा के लिए कक्षा में स्थान बनाकर पाश को बाएं हाथ में लेकर दाहिने हाथ से उधेड़े। पाश को कुण्डलाकार बनाकर सब ओर घुमाए और शत्रु के मस्तक पर प्रहार करना चाहिए।[41] पहले तिनके के बने और चमड़े से मढ़े पुरुष पर उसका प्रयोग करना चाहिए। बाद में सम्यक रूप से प्रयोग करना होता है। उसके बाद उछलते कूदते और जोर–जोर से चिल्लाते मनुष्यों पर प्रयोग करे और यदि दोनों पर सफल हो जाए तो पाश को युद्ध में उपयोग करना चाहिए।[42] सुशिक्षित योद्धा को शत्रु पर विजय पाकर शत्रु के प्रति पाश–बन्धन की क्रिया करनी चाहिए।[43]

तलवार को अपने पास रखने एवं शत्रु पर चलाने की विधि :–

कमर में म्यान सहित तलवार बाँधकर उसे लटकाना है। म्यान को बाएं हाथ से दृढ़ता के साथ पकड़कर दाएं हाथ से तलवार को बाहर निकाले। अग्निपुराण के अनुसार तलवार की चौडाई छः अंगुल तथा लम्बाई सात हाथ की होनी चाहिए।[44]

लाठी को अपने पास रखने एवं शत्रु पर चलाने की विधिः –

अग्निदेव कहते हें कि तूणीर में चमड़े में मढ़ी हुई नई और मजबूत लाठी योद्धा को अपने पास रखनी चाहिए। लाठी को दाहिने हाथ की अंगुली से उठाकर जिसके उपर जोर से आघात करेगा उसका नाश हो जाएगा। यह क्रिया सिद्ध हो जाने पर दोनों हाथों से लाठी को शत्रु पर प्रहार करना चाहिए। इससे अनायास ही वह शत्रु का वध हो जाएगा। इसी प्रकार लाठी को युद्धोपयोगी बताया गया है। रणभूमि में संचरण के लिए वाहनों को श्रम कराते रहना चाहिए।[45]

धनुर्वेद पर इस समय जो ग्रन्थ मिलते हैं उनमें अग्निपुराणगत पाठ नहीं मिलता है। विश्वकोष में इसी अग्निपुराण के चार अध्याय उद्धृत किए गए हैं।

अग्निपुराण के प्रथम अध्याय में धनुर्वेद के पाद–प्रकारादि की सामान्य भूमिका का स्थापन करके अस्त्र–शस्त्र के प्रकार आदि का विवेचन मिलता है। जिसमें युद्धशास्त्र का मूल नाम धनुर्वेद बताया गया है। अर्थात ऐसा आयुध जो सभी अस्त्र–शस्त्रों में सर्वश्रेष्ठ है। इस ग्रन्थ के प्रथम चार अध्यायों में से दो अध्यायों में धनुष्यबाण का वर्णन प्राप्त होता है। भगवान शिव उपदेश देते हुए कहते हैं –

एकोऽपि यत्र नगरे प्रसिद्धः स्याद्धनुर्धरः।
ततो यान्त्यरयो दूरं मृगाः सिंहगृहादिव।।[46]

ISSN : 2582-9092

भगवान अग्निदेव ने भी प्रथम अध्याय में धनुर्वेद में युद्ध के अलग–अलग स्थान, धनुर्निमाण, दण्ड, दण्ड के नाम, प्रत्यच्चा और उसके उपकरण, उसकी माप, प्रत्यञ्चा बाण, बाण प्रकड़ना, बाण सन्धान और सन्धान के समय रखने योग्य सवाधानी के साथ सन्धान, काले धनुर्धर की शारीरिक मानसिक अवस्था बाण ग्रहण की चालनविधि, अधमोतमादि बाण के प्रकार धनुष का आकर्षण, बाण मोचनादि योद्धा के विविध नाप वाले धनुरादि का विस्तृत वर्णन किया है।

दूसरे अध्याय में तूणीर धनुष्य का नाप, कवच धारण, तूणीर से बाण निकालना, बाण का सन्धान, योद्धा की चित्त अवस्था, धनुष्य की प्रत्यंचा, बाण के साथ धनुष्य पकड़ने की मुट्ठी, लक्ष्य की ओर बाण मोचन लक्ष्याभ्यास, वेध के प्रकार, भ्रमण और अन्तं में कर्मयोग विधान का ज्ञाता पुरुष सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर होनें का और धनुर्धर की मन नेत्र और दृष्टि द्वारा लक्ष्य के साथ एकता स्थापना की कला आदि का वर्णन किया गया है। ऐसे योद्धा यमराज पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं।

तीसरे अध्याय में पाश के निमार्ण की विधि, पाश की शिक्षा और प्रयोग विधि का वर्णन किया गया हे। इसी अध्याय में तलवार और लाठी को अपने पास रखने और शत्रु पर चलाने की पद्धति का भी निर्देश दिया गया है।

अन्त में चौथे अध्याय में तलवार के बत्तीस पाश, चक्र, शूल, तोमर, गदा, परशु,मुदगर, भिन्दिपाल, वज्र, कृपाण, क्षेपणी, गदायुद्ध तथा मल्लयुद्ध आदि का वर्णन किया गया है।

सारांश :– अन्ततोगत्वा अग्निपुराण में वर्णित धनुर्वेद में विशेषतः अस्त्र–शस्त्र के निर्माण और उसके प्रयोग आदि का वर्णन किया गया है। जिसमें धनुष्य और बाण के बारे में विस्तार से चर्चा अग्निपुराणकार ने की है। किन्तु धनुर्वेद में इनके बिना भी सैन्य के अधिकारीगण की गुणवत्ता, विविध युद्ध के नियम, नियुक्ति की योजना, घायल सैनिकों की जानकारी, गुप्तचर व्यवसाी, युद्धरत सैनिक, पशु आदि के शस्त्र अन्नादि की आवश्यकताएं , वैदकीय–विभाग, युद्ध में स्त्रियों की उपस्थिति, युद्ध के प्रकार, सैन्य परक्षण एवं सैन्य प्रशिक्षण, आदि विषयों को राजनीतिक पुस्ताकें में प्रस्तुत किया है लेकिन अग्निपुराणकार ने इन राजनीतिक विषयों का उल्लेख नहीं किया है।

धनुर्वेद के अध्ययन से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी निकलता है कि युद्धविद्या का जिक्र अनेक शास्त्रों में प्राप्त होता है। यथा धातुविद्या, ज्योतिषशास्त्र, पातंजलयोग–आयुर्वेद, युद्धजयार्णव–कर्मकाण्ड, स्वरशास्त्र– व्याकारणशास्त्र, स्मृति–नीतिशास्त्र, मन्त्रशास्त्रादि शास्त्रों के अभ्यास के बिना कोई भी योद्धा पूर्ण योद्धा नहीं बना सकता है।

सन्दर्भ–सूची

1- अग्निपुराण – 248 / 1

2- यन्त्रमुक्तं पाणिमुक्तं मुक्तसन्धानारितं तथा।
अमुक्तं बाहुयुद्धच्च पच्चधा तत प्रकीर्तितम्।। अग्नि–2 / 248

3- महाभारत, आदि–220 / 72

4- महाभारत के नीलकंठ टीका–आदि. 220 / 72

5- नीतिप्रकाशिकायां –2 / 11

ISSN : 2582-9092

6- महाभारत आदि.– 126 / 29

7- अग्निपुराण–249 / 1

8- शुक्रनीति सार–127–135 से 142

9- शुक्रनीति सार–127–135 से 142

10- शुक्रनीति सार–127–135 से 142

11- शुक्रनीति सार–127–135 से 142

12- अग्निपुराण–249 / 2

13- अग्निपुराण–243 / 3

14- अग्निपुराण–243 / 4

15- अग्निपुराण–243 / 5

16- अग्निपुराण–243 / 6

17- धनुः श्रेष्ठानि प्रास मध्यानि तानि च।
तनि खडगजघन्यानि बाहुप्रत्यचराणि च।। अग्नि.–246 / 6,7

18- अग्नि. –249 / 7

19- वा. धनु. 1 / 3

20- देशस्थैः शंकरै राज्ञः कार्या युद्धे सहायता। अग्नि–249 / 8

21- स्थानान्यष्टौ विधेयामि योजने भिन्नकर्म्मणाम्। – वा. धनु.1 / 76

22- अग्निपुराण–249 / 23

23- अग्निपुराण–249 / 24

24- अग्निपुराण–249 / 25–27

25- वा. धनु. 1 / 50–51

26- अग्निपुराण–249 / 36–37

27- वा. धनु. 1 / 31–32

28- अग्निपुराण–250 / 1 से 4

29- वा.धनु.1 / 90

ISSN : 2582-9092

30- अग्निपुराण–250 / 4–6
31- अग्निपुराण–250 / 8
32- अग्निपुराण–250 / 9–10
33- अग्निपुराण–250 / 11–12
34- शिव. धनु. 1 / 16–17
35- अग्निपुराण–250 / 13–14
36- अग्निपुराण–250 / 15–16
37- अग्निपुराण–250 / 17–18
38- वा.धनु. 1 / 87
39- वा.धनु. 1 / 80
40- अग्निपुराण–251 / 4
41- अग्निपुराण–251 / 5
42- अग्निपुराण–25ु / 5
43- अग्निपुराण–251 / 8
44- अग्निपुराण–251 / 11–12
45- अग्निपुराण–251 / 13
46- शिवप्रोक्त धनुर्वेदे – 1 / 5

सन्दर्भ–ग्रन्थ

1- अग्निपुराण, (मूल संस्कृत का हिन्दी अनुवाद) गीताप्रेस, गोरखपुर, 14वां संस्करण, सं.2071
2- अग्निपुराण, (हिन्दी व्याख्या) आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान, प्रथम संस्करण, 2004 ई.
3- धनुर्वेद संहिता–महर्षि वशिष्ठ विरचित– अनुवादक, द्वारका प्रसाद शास्त्री, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, द्वितीय संस्करण सं.–2064
4- नीति प्रकाशिका –
Edited by, Gustav Oppert, kumar borthers, New Delhi, 1970

ISSN : 2582-9092

5- Dhanurveda, The Vedic military, science, by, Ravi Prakash Arya, Dilip and Dipika Doctor of International Vedic Vision, New York

6- महर्षि शुक्राचार्य विरचित, शुक्रनीति , व्याख्याकार– डॉ. जगदीश चन्द्र मिश्र, चौखम्भ प्रकाशन, वाराणसी, पुनर्मुदित संस्करण–2009

शोधच्छात्र,
संस्कृत महाविद्यालय
बरोडा संस्कृत–महाविद्यालय,
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बडौदा, वडोदरा